

1919 की एक बात

स्टोरीलाइन

आज़ादी के संघर्ष में अंग्रेज़ की गोली से शहीद होने वाले एक वेश्या के बेटे की कहानी है। तुफ़ैल उर्फ़ थैला कंजर की दो बहनें भी वेश्या थीं। तुफ़ैल एक अंग्रेज़ को मौत के घाट उतार कर खुद शहीद हो गया था। अंग्रेज़ों ने बदला लेने के उद्देश्य से उसकी दोनों बहनों को बुला कर मुजरा कराया और उनकी इज़्ज़त को तार-तार किया।

ये 1919 ई. की बात है भाई जान, जब रूल्ट ऐक्ट के खिलाफ़ सारे पंजाब में एजिटेशन हो रही थी। मैं अमृतसर की बात कर रहा हूँ। सर माईकल ओडवायर ने डिफ़ेंस आफ़ इंडिया रूल्ज़ के मातहत गांधी जी का दाखिला पंजाब में बंद कर दिया था। वो इधर आ रहे थे कि पलवाल के मुक़ाम पर उनको रोक लिया गया और गिरफ़्तार कर के वापस बम्बई भेज दिया गया। जहां तक मैं समझता हूँ भाई जान, अगर अंग्रेज़ ये ग़लती न करता तो जलियाँवाला बाग़ का हादिसा उसकी हुक़मरानी की स्याह तारीख़ में ऐसे ख़ूनी वर्क़ का इज़ाफ़ा कभी न करता।

क्या मुसलमान, क्या हिंदू, क्या सिख, सबके दिल में गांधी जी की बेहद इज़्ज़त थी। सब उन्हें महात्मा मानते थे। जब उनकी गिरफ़्तारी की ख़बर लाहौर पहुंची तो सारा कारोबार एक दम बंद हो गया। यहां से अमृतसर वालों को मालूम हुआ, चुनांचे यूं चुटकियों में मुक़म्मल हड़ताल हो गई।

कहते हैं कि नौ अप्रैल की शाम को डाक्टर सत्यपाल और डाक्टर किचलू की जिला वतनी के अहकाम डिप्टी कमिशनर को मिल गए थे। वो उनकी तामील के लिए तैयार नहीं था। इसलिए कि उसके ख़याल के मुताबिक़ अमृतसर में किसी हैजानखेज बात का ख़तरा नहीं था।

लोग पुरअम्र तरीक़े पर एहतिजाजी जलसे वग़ैरा करते थे जिनसे तशद्दुद का सवाल ही पैदा नहीं होता था। मैं अपनी आँखों देखा हाल बयान करता हूँ। नौ को रामनवमी था। जलूस निकला मगर मजाल है जो किसी ने हुक़ाम की मर्ज़ी के खिलाफ़ एक क़दम उठाया हो, लेकिन भाई जान, सर माईकल अजब औंधी खोपरी का इंसान था।

उसने डिप्टी कमिशनर की एक न सुनी। उस पर बस यही खौफ़ सवार था कि ये लीडर महात्मा गांधी के इशारे पर सामराज का तख्ता उलटने के दर पे हैं और जो हड़तालें हो रही हैं और जल्से मुनअक्किद होते हैं उनके पस-ए-पर्दा यही साज़िश काम कर रही है।

डाक्टर किचलू और डाक्टर सत्यपाल की जिला वतनी की ख़बर आनन-फ़ानन शहर में आग की तरह फैल गई। दिल हर शख्स का मुकद्दर था। हर वक़्त धड़का सा लगा रहता था कि कोई बहुत बड़ा हादसा बरपा होने वाला है, लेकिन भाई जान, जोश बहुत ज़्यादा था। कारोबार बंद थे। शहर क़ब्रिस्तान बना हुआ था, पर इस क़ब्रिस्तान की ख़ामोशी में भी एक शोर था।

जब डॉ. किचलू और सत्यपाल की गिरफ़्तारी की ख़बर आई तो लोग हज़ारों की तादाद में इकट्ठे हुए कि मिल कर डिप्टी कमिशनर बहादुर के पास जाएं और अपने महबूब लीडरों की जिला वतनी के अहकाम मंसूख कराने की दरखास्त करें। मगर वो ज़माना भाई जान दरखास्तें सुनने का नहीं था। सर माईकल जैसा फ़िरऔन हाकिम-ए-आला था। उसने दरखास्त सुनना तो कुजा लोगों के इस इजतिमा ही को ग़ैरक़ानूनी क़रार दिया।

अमृतसर... वो अमृतसर जो कभी आज़ादी की तहरीक का सबसे बड़ा मर्कज़ था जिसके सीने पर जलियाँवाला बाग़ जैसा क़ाबिल-ए-फ़ख़्र ज़ख़्म था। आज किस हालत में है? लेकिन छोड़ीए इस किस्से को। दिल को बहुत दुख होता है। लोग कहते हैं कि इस मुक़द्दस शहर में जो कुछ आज से पाँच बरस पहले हुआ उसके ज़िम्मेदार भी अंग्रेज़ हैं। होगा भाई जान, पर सच पूछिए तो इस लहू में जो वहां बहा है हमारे अपने ही हाथ रंगे हुए नज़र आते हैं। ख़ैर!

डिप्टी कमिशनर साहब का बंगला सिविल लाईन्ज़ में था। हर बड़ा अफ़सर और हर बड़ा टोडी शहर के इस अलग थलग हिस्से में रहता था... आपने अमृतसर देखा है तो आपको मालूम होगा कि शहर और सिविल लाईन्ज़ को मिलाने वाला एक पुल है जिस पर से गुज़र कर आदमी ठंडी सड़क पर पहुंचता है। जहां हाकिमों ने अपने लिए ये अर्ज़ी जन्नत बनाई हुई थी।

हुजूम जब हाल दरवाज़े के क़रीब पहुंचा तो मालूम हुआ कि पुल पर घोड़ सवार गोरों का पहरा है। हुजूम बिल्कुल न रूका और बढ़ता गया। भाई जान, मैं उस में शामिल था। जोश कितना था, मैं बयान नहीं कर सकता, लेकिन सब निहत्ते थे। किसी के पास एक मामूली छड़ी तक भी नहीं थी।

असल में वो तो सिर्फ़ इस गरज़ से निकले थे कि इजतमाई तौर पर अपनी आवाज़ हाकिम-ए-शहर तक पहुंचाएं और उससे दरखास्त करें कि डाक्टर किचलू और डाक्टर सत्यपाल को

गैरमशरूत तौर पर रिहा करदे। हुजूम पुल की तरफ़ बढ़ता रहा। लोग क़रीब पहुंचे तो गोरों ने फ़ायर शुरू करदिए। इससे भगदड़ मच गई। वो गिनती में सिर्फ़ बीस-पच्चीस थे और हुजूम सैकड़ों पर मुश्तमिल था, लेकिन भाई गोली की दहशत बहुत होती है। ऐसी अफ़रातफ़री फैली कि अल अमां। कुछ गोलियों से घायल हुए और कुछ भगदड़ में ज़ख़मी हुए।

दाएं हाथ को गंदा नाला था। धक्का लगा तो मैं उसमें गिर पड़ा। गोलियां चलनी बंद हुईं तो मैंने उठ कर देखा। हुजूम तितर-बितर हो चुका था। ज़ख़मी सड़क पर पड़े थे और पुल पर गोरे खड़े हंस रहे थे। भाई जान, मुझे क़तअन याद नहीं कि उस वक़्त मेरी दिमागी हालत किस किस्म की थी।

मेरा ख़याल है कि मेरे होश-ओ-हवास पूरी तरह सलामत नहीं थे। गंदे नाले में गिरते वक़्त तो क़तअन मुझे होश नहीं था। जब बाहर निकला तो जो हादिसा वकूअ पज़ीर हुआ था, उसके ख़द्-ओ-ख़ाल आहिस्ता आहिस्ता दिमाग़ में उभरने शुरू हुए।

दूर शोर की आवाज़ सुनाई दे रही थी जैसे बहुत से लोग गुस्से में चीख-चिल्ला रहे हैं। मैं गंदा नाला उबूर करके ज़ाहिरा पीर के तक़िए से होता हुआ हाल दरवाज़े के पास पहुंचा तो देखा कि तीस-चालीस नौजवान जोश में भरे पथर उठा उठा कर दरवाज़े के घड़ियाल पर मार रहे हैं। उसका शीशा टूट कर सड़क पर गिरा तो एक लड़के ने बाक़ीयों से कहा, “चलो... मलिका का बुत तोड़ें!”

दूसरे ने कहा, “नहीं यार... कोतवाली को आग लगाएँ!”

तीसरे ने कहा, “और सारे बैंकों को भी!”

चौथे ने उनको रोका, “ठहरो... इससे क्या फ़ायदा... चलो पुल पर उन लोगों को मारें।”

मैंने उसको पहचान लिया। ये थैला कंजर था... नाम मोहम्मद तुफ़ैल था मगर थैला कंजर के नाम से मशहूर था। इसलिए कि एक तवाइफ़ के बतन से था। बड़ा आवारागर्द था। छोटी उम्र ही में उसको जुए और शराबनोशी की लत पड़ गई थी।

उसकी दो बहनें शमशाद और अलमास अपने वक़्त की हसीन-तरीन तवाइफ़ें थीं। शमशाद का गला बहुत अच्छा था। उसका मुजरा सुनने के लिए रईस बड़ी बड़ी दूर से आते थे। दोनों अपने भाई के करतूतों से बहुत नालां थीं। शहर में मशहूर था कि उन्होंने एक किस्म का उसको आक्र कर रखा है।

फिर भी वो किसी न किसी हीले अपनी ज़रूरियात के लिए उनसे कुछ न कुछ वसूल कर ही लेता था। वैसे वो बहुत खुशपोश रहता था। अच्छा खाता था, अच्छा पीता था। बड़ा नफ़ासतपसंद था। बज़्लासंजी और लतीफ़ा गोई मिज़ाज में कूट कूट के भरी थी। मीरासियों और भांडों के सोक़यानापन से बहुत दूर रहता था। लंबा क़द, भरे भरे हाथ-पांव, मज़बूत कसरती बदन। नाक-नक़्शे का भी ख़ासा था।

पुरजोश लड़कों ने उसकी बात न सुनी और मलिका के बुत की तरफ़ चलने लगे। उसने फिर उनसे कहा, “मैंने कहा मत ज़ाए करो अपना जोश। इधर आओ मेरे साथ... चलो उनको मारें जिन्होंने हमारे बेक़सूर आदमियों की जान ली है और उन्हें ज़ख़मी किया है... ख़ुदा की क़सम हम सब मिल कर उनकी गर्दन मरोड़ सकते हैं... चलो!”

कुछ रवाना हो चुके थे, बाक़ी रुक गए। थैला पुल की तरफ़ बढ़ा तो उसके पीछे चलने लगे। मैंने सोचा कि माओं के ये लाल बेकार मौत के मुँह में जा रहे हैं। फव्वारे के पास दुबका खड़ा था। वहीं मैंने थैले को आवाज़ दी और कहा, “मत जाओ यार... क्यों अपनी और उनकी जान के पीछे पड़े हो।”

थैले ने ये सुन कर एक अजीब सा क़हक़हा बुलंद किया और मुझ से कहा, “थैला सिर्फ़ ये बताने चला है कि वो गोलियों से डरने वाला नहीं।” फिर वो अपने साथियों से मुखातिब हुआ, “तुम डरते हो तो वापस जा सकते हो।”

ऐसे मौक़ों पर बढ़े हुए क़दम उल्टे कैसे हो सकते हैं और फिर वो भी उस वक़्त जब लीडर अपनी जान हथेली पर रख कर आगे आगे जा रहा हो। थैले ने क़दम तेज़ किए तो उसके साथियों को भी करने पड़े।

हाल दरवाज़े से पुल का फ़ासिला कुछ ज़्यादा नहीं होगा कोई... साठ-सत्तर गज़ के करीब... थैला सब से आगे आगे था। जहां से पुल का दो रोंया मुतवाज़ी जंगला शुरू होता है, वहां से पंद्रह-बीस क़दम के फ़ासले पर दो घुड़सवार गोरे खड़े थे। थैला नारे लगाता जब बंगले के आगाज़ के पास पहुंचा तो फ़ायर हुआ, मैं समझा कि वो गिर पड़ा है... लेकिन देखा कि वो उसी तरह... ज़िंदा आगे बढ़ रहा है। उसके बाक़ी साथी डर के भाग उठे हैं। मुड़ कर उसने पीछे देखा और चिल्लाया, “भागो नहीं... आओ!”

उसका मुँह मेरी तरफ़ था कि एक और फ़ायर हुआ। पलट कर उसने गोरों की तरफ़ देखा और पीठ पर हाथ फेरा... भाई जान, नज़र तो मुझे कुछ नहीं आना चाहिए था, मगर मैंने देखा कि उसकी सफ़ेद बोंसकी की क़मीज़ पर लाल लाल धब्बे थे।

वो और तेज़ी से बढ़ा, जैसे ज़ख़्मी शेर... एक और फ़ायर हुआ। वो लड़खड़ाया मगर एक दम क़दम मज़बूत करके वो घुड़ सवार गोरे पर लपका और चश्म ज़दन में जाने क्या हुआ... घोड़े की पीठ ख़ाली थी। गोरा ज़मीन पर था और थैला उसके ऊपर... दूसरे गोरे ने जो क़रीब था और पहले बौखला गया था, बिदकते हुए घोड़े को रोका और धड़ा धड़ फ़ायर शुरू कर दिए... इसके बाद जो कुछ हुआ मुझे मालूम नहीं। मैं वहां फव्वारे के पास बेहोश हो कर गिर पड़ा।

भाई जान, जब मुझे होश आया तो मैं अपने घर में था। चंद पहचान के आदमी मुझे वहां से उठा लाए थे। उनकी ज़बानी मालूम हुआ कि पुल पर से गोलियां खा कर हुजूम मुश्तइल होगया था। नतीजा इस इश्तिआल का ये हुआ कि मलिका के बुत को तोड़ने की कोशिश की गई। टाउन हाल और तीन बैंकों को आग लगी और पाँच या छः यूरोपीयन मारे गए। खूब लूट मची।

लूट-खसूट का अंग्रेज़ अफ़सरों को इतना ख़याल नहीं था। पाँच या छः यूरोपीयन हलाक हुए थे, उसका बदला लेने के लिए, चुनांचे जलियाँ वाला बाग़ का खूनी हादिसा रूनुमा हुआ।

डिप्टी कमिशनर बहादुर ने शहर की बाग-डोर जनरल डायर के सपुर्द करदी। चुनांचे जनरल साहिब ने बारह अप्रैल को फ़ौजियों के साथ शहर के मुख्तलिफ़ बाज़ारों में मार्च किया और दर्जनों बेगुनाह आदमी गिरफ़्तार किए। तेरह को जलियाँ वाला बाग़ में जलसा हुआ। क़रीब-क़रीब पच्चीस हज़ार का मजमा था।

शाम के क़रीब जनरल डायर मुसल्लह गोरों और सिखों के साथ वहां पहुंचा और निहत्ते आदमियों पर गोलियों की बारिश शुरू कर दी।

उस वक़्त तो किसी को नुक़सान जान का ठीक अंदाज़ा नहीं था। बाद में जब तहक़ीक़ हुई तो पता चला कि एक हज़ार हलाक हुए हैं और तीन या चार हज़ार के क़रीब ज़ख़्मी... लेकिन मैं थैले की बात कर रहा था... भाई जान, आँखों देखी आप को बता चुका हूँ... बेऐब ज़ात ख़ुदा की है।

मरहूम में चारों ऐब शरई थे। एक पेशा तवाइफ़ के बतन से था मगर जियाला था। मैं अब यक़ीन के साथ कह सकता हूँ कि इस मलऊन गोरे की पहली गोली भी उसके लगी थी। आवाज़ सुन कर उसने जब पलट कर अपने साथियों की तरफ़ देखा था और उन्हें हौसला दिलाया था।

जोश की हालत में उसको मालूम नहीं हुआ था कि उसकी छाती में गर्म-गर्म सीसा उतर चुका है। दूसरी गोली उसकी पीठ में लगी। तीसरी फिर सीने में... मैंने देखा नहीं, पर सुना है जब थैले की लाश गोरे से जुदा की गई तो उसके दोनों हाथ उसकी गर्दन में इस बुरी तरह पैवस्त थे कि अलाहिदा नहीं होते थे... गोरा जहन्नुम वासिल हो चुका था।

दूसरे रोज़ जब थैले की लाश कफ़न-दफ़न के लिए उसके घर वालों के सपुर्द की गई तो उसका बदन गोलियों से छलनी हो रहा था। दूसरे गोरे ने तो अपना पूरा पिस्तौल उस पर ख़ाली कर दिया था।

मेरा ख़याल है उस वक़्त मरहूम की रूह क़फ़स-ए-उंसुरी से परवाज़ कर चुकी थी। उस शैतान के बच्चे ने सिर्फ़ उसके मुर्दा जिस्म पर चांद मारी की थी।

कहते हैं जब थैले की लाश मुहल्ले में पहुंची तो कुहराम मच गया। अपनी बिरादरी में वो इतना मक़बूल नहीं था, लेकिन उसकी क़ीमा-क़ीमा लाश देख कर सब धाड़ें मार मार कर रोने लगे। उसकी बहनें शमशाद और अलमास तो बेहोश होगईं। जब जनाज़ा उठा तो उन दोनों ने ऐसे बैन किए कि सुनने वाले लहू के आँसू रोते रहे।

भाई जान, मैंने कहीं पढ़ा था कि फ़्रांस के इन्क़िलाब में पहली गोली वहां की एक टख़याई के लगी थी। मरहूम मुहम्मद तुफ़ैल एक तवाइफ़ का लड़का था। इन्क़िलाब की इस जद्द-ओ-जहद में उसको जो पहली गोली लगी थी दसवीं थी या पचासवीं। इसके मुताल्लिक़ किसी ने भी तहक़ीक़ नहीं की। शायद इसलिए कि सोसाइटी में इस ग़रीब का कोई रुतबा नहीं था।

मैं तो समझता हूँ पंजाब के इस ख़ूनी गुसल में नहाने वालों की फ़हरिस्त में थैले कंजर का नाम-ओ-निशान तक भी नहीं होगा और ये भी कोई पता नहीं कि ऐसी कोई फ़हरिस्त तैयार भी हुई थी।

सख़्त हंगामी दिन थे। फ़ौजी हुकूमत का दौर-दौरा था। वो देव जिसे मार्शल ला कहते हैं, शहर के गली-गली, कूचे-कूचे में डकारता फिरता था। बहुत अफ़रा तफ़री के आलम में उस ग़रीब

को जल्दी जल्दी यूँ दफ़न किया गया जैसे उसकी मौत उसके सोगवार अज़ीज़ों का एक संगीन जुर्म थी जिसके निशानात वो मिटा देना चाहते थे।

बस भाई जान, थैला मर गया। थैला दफ़ना दिया गया और... और ये कह कर मेरा हमसफ़र पहली मर्तबा कुछ कहते-कहते रुका और ख़ामोश हो गया।

ट्रेन दनदनाती हुई जा रही थी। पटड़ियों की खटाखट ने ये कहना शुरू कर दिया। थैला मर गया... थैला दफ़ना दिया गया... थैला मर गया ... थैला दफ़ना दिया गया। इस मरने और दफ़नाने के दरमियान कोई फ़ासला नहीं था, जैसे वो इधर मरा और उधर दफ़ना दिया गया।

और खट-खट के साथ इन अलफ़ाज़ की हम-आहंगी कुछ इस क़दर ज़ब्बात से आरी थी कि मुझे अपने दिमाग़ से उन दोनों को जुदा करना पड़ा। चुनांचे मैंने अपने हम सफ़र से कहा, “आप कुछ और भी सुनाने वाले थे?”

चौंक कर उसने मेरी तरफ़ देखा, “जी हाँ... उस दास्तान का एक अफ़सोसनाक हिस्सा बाक़ी है।”

मैंने पूछा, “क्या?”

उसने कहना शुरू किया, “मैं आपसे अर्ज़ कर चुका हूँ कि थैले की दो बहनें थीं, शमशाद और अलमास। बहुत ख़ूबसूरत थीं। शमशाद लंबी थी। पतले पतले नक्श, ग़लाफ़ी आँखें। ठुमरी बहुत ख़ूब गाती थी। सुना है ख़ां साहब फ़तह अली ख़ां से तालीम लेती रही थी।

दूसरी अलमास थी। उसके गले में सुर नहीं था, लेकिन बतावे में अपना सानी नहीं रखती थी। मुजरा करती थी तो ऐसा लगता था कि उसका अंग-अंग बोल रहा है। हर भाव में एक घात होती थी... आँखों में वो जादू था जो हर एक के सर पर चढ़ के बोलता था।” मेरे हम सफ़र ने तारीफ़-ओ-तौसीफ़ में कुछ ज़रूरत से ज़्यादा वक़्त लिया। मगर मैंने टोकना मुनासिब न समझा।

थोड़ी देर के बाद वो ख़ुद इस लंबे चक्कर से निकला और दास्तान के अफ़सोसनाक हिस्से की तरफ़ आया, “क़िस्सा ये है भाई जान कि इन आफ़त की परकाला दो बहनों के हुस्न-ओ-जमाल का ज़िक्र किसी ख़ुशामदी ने फ़ौजी अफ़सरों से कर दिया... बलवे में एक मेम... क्या नाम था उस चुड़ैल का? मिस... मिस शरवड मारी गई थी... तय ये हुआ कि उनको बुलवाया जाये और... और... जी भर के इंतिक़ाम लिया जाये। आप समझ गए न भाई जान?”

मैंने कहा, “जी हाँ!”

मेरे हमसफ़र ने एक आह भरी, “ऐसे नाजुक मुआमलों में तवाइफ़ें और कस्बीयाँ भी अपनी माएं-बहनें होती हैं... मगर भाई जान, ये मुल्क अपनी इज़्ज़त-ओ-नामूस को मेरा खयाल है पहचानता ही नहीं।

जब ऊपर से इलाक़े के थानेदार को आर्डर मिला तो वो फ़ौरन तैयार हो गया। चुनांचे वो खुद शमशाद और अलमास के मकान पर गया और कहा कि साहब लोगों ने याद किया है। वो तुम्हारा मुजरा सुनना चाहते हैं। भाई की क़ब्र की मिट्टी भी अभी तक खुशक नहीं हुई थी। अल्लाह को प्यारा हुए उस ग़रीब को सिर्फ़ दो दिन हुए थे कि ये हाज़िरी का हुक्म सादिर हुआ कि आओ हमारे हुज़ूर नाचो।

अज़ियत का इससे बढ़ कर पुरअज़ियत तरीक़ा क्या हो सकता है? मुस्तबइद तमस्बुर की ऐसी मिसाल मेरा खयाल है शायद ही कोई और मिल सके... क्या हुक्म देने वालों को इतना खयाल भी न आया कि तवाइफ़ भी ग़ैरत मंद होती है? हो सकती है... क्यों नहीं हो सकती?” उसने अपने आपसे सवाल किया, लेकिन मुखातिब वो मुझ से था।

मैंने कहा, “हो सकती है!”

“जी हाँ”... थैला आख़िर उनका भाई था। उसने किसी क़िमारख़ाने की लड़ाई-भिड़ाई में अपनी जान नहीं दी थी। वो शराब पी कर दंगा-फ़साद करते हुए हलाक नहीं हुआ था। उसने वतन की राह में बड़े बहादुराना तरीक़े पर शहादत का ज़ाम पिया था। वो एक तवाइफ़ के बतन से था। लेकिन वो तवाइफ़ माँ थी और शमशाद और अलमास उसी की बेटियाँ थीं और ये थैले की बहनें थीं... तवाइफ़ें बाद में थीं... और वो थैले की लाश देख कर बेहोश हो गई थीं। जब उसका जनाज़ा उठा था तो उन्होंने ऐसे बैन किए थे कि सुन कर आदमी लहू रोता था।

मैंने पूछा, “वो गई?”

मेरे हम सफ़र ने इसका जवाब थोड़े वक़फ़े के बाद अफ़सुरदगी से दिया, “जी हाँ... जी हाँ गई... ख़ूब सज-बन कर।”

एक दम उसकी अफ़सुरदगी तीखापन इख़्तियार कर गई, “सोलह सिंगार करके अपने बुलाने वालों के पास गई... कहते हैं कि ख़ूब महफ़िल जमी... दोनों बहनों ने अपने जौहर दिखाए... ज़र्क़-बर्क़ पेशवाज़ों में मलबूस वो कोह-ए-क़ाफ़ की परियां मालूम होती थीं।

शराब के दौर चलते रहे और वो नाचती गाती रहीं। ये दोनों दौर चलते रहे और कहते हैं कि रात के दो बजे एक बड़े अफ़सर के इशारे पर महफ़िल बरखास्त हुई।” वो उठ खड़ा हुआ और बाहर भागते हुए दरख्तों को देखने लगा।

पहियों और पटड़ियों की आहनी गड़गड़ाहट की ताल पर उसके आखिरी दो लफ़्ज़ नाचने लगे, “बरखास्त हुई... बरखास्त हुई।”

मैंने अपने दिमाग़ में उन्हें, आहनी गड़गड़ाहट से नोच कर अलाहिदा करते हुए उससे पूछा, “फिर क्या हुआ?”

भागते हुए दरख्तों और खंबों से नज़रें हटा कर उसने बड़े मज़बूत लहजे में कहा, “उन्होंने अपनी ज़र्क़-बर्क़ पेशवाज़ें नोच डालीं और अलिफ़ नंगी होगई और कहने लगीं... लो देख लो... हम थैले की बहनें हैं। उस शहीद की जिसके ख़ूबसूरत जिस्म को तुमने सिर्फ़ इसलिए अपनी गोलियों से छलनी छलनी किया था कि उसमें वतन से मोहब्बत करने वाली रूह थी। हम उसी की ख़ूबसूरत बहनें हैं... आओ, अपनी शहवत के गर्म-गर्म लोहे से हमारा ख़ुशबूओं में बसा हुआ जिस्म दागदार करो... मगर ऐसा करने से पहले सिर्फ़ हमें एक बार अपने मुँह पर थूक लेने दो।”

ये कह कर वो ख़ामोश हो गया, कुछ इस तरह कि और नहीं बोलेगा। मैंने फ़ौरन ही पूछा, “फिर क्या हुआ?”

उसकी आँखों में आँसू डबडबा आए, “उनको... उनको गोली से उड़ा दिया गया।”

मैंने कुछ न कहा। गाड़ी आहिस्ता होकर स्टेशन पर रुकी तो उसने कुली बुला कर अपना अस्बाब उठवाया। जब जाने लगा तो मैंने उससे कहा, “आपने जो दास्तान सुनाई, उसका अंजाम मुझे आप का ख़ुद साख़्ता मालूम होता है।”

एक दम चौंक कर उसने मेरी तरफ़ देखा, “ये आपने कैसे जाना?”

मैंने कहा, “आपके लहजे में एक नाक़ाबिल-ए-बयान कर्ब था।”

मेरे हम सफ़र ने अपने हलक़ की तलख़ी थूक के साथ निगलते हुए कहा, “जी हाँ... उन हराम...” वो गाली देते-देते रुक गया, “उन्होंने अपने शहीद भाई के नाम पर बट्टा लगा दिया।” ये कह कर वो प्लेटफार्म पर उतर गया।

TALENTALKS